International Journal of Jyotish Research: 2017; 2(2): 13-17

International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

**ISSN:** 2456-4427
**Impact Factor:** RJIF: 5.11
Jyotish 2017; 2(2): 13-17
© 2017 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 12-11-2017
Accepted: 15-12-2017

**जितेन्द्र कुमार दुबे**
श्रीमती लाडदेवी शर्मा पंचोली आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, बरुन्दनी, भीलवाड़ा (राजस्थान)

**Correspondence**
**जितेन्द्र कुमार दुबे**
**श्रीमती लाडदेवी शर्मा पंचोली आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, बरुन्दनी, भीलवाड़ा (राजस्थान)**

# ।। काल विमर्शः।।

**जितेन्द्र कुमार दुबे**

**प्रस्तावना**

ज्योतिष शास्त्र के प्रणेता आचार्यगण काल को ही विश्व का उत्पादक पालक और संहारकारक माने है स्वयं भगवान सूर्य ने कहा है---

लोकानामन्तकृत्कालः कालोऽन्यःकलनात्मकः।
स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते ।।
(सू. सि. मध्यमाधिकार श्लोक. सं.१०)

विश्व के उत्पादक और प्रलय कारक काल के दो भेद हैं। एक तो समस्त लोक (चर-अचर ) को संहार करके स्वयं अव्यय अनंत रूप रहने वाला महाकाल है। दूसरा काल सावयव कलनात्मक व्यवहारार्थ गणना करने योग्य है। वह (कलनात्मक) काल स्थूल और सूक्ष्म भेद से मूर्त (प्रत्यक्ष ) और अमूर्त (अप्रत्यक्ष ) रूप दो प्रकार का है। विशेष विचार- यह है कि (काल दो प्रकार का होता है) एक काल प्राणियों (सृष्टि) का संहार करने वाला तथा दूसरा गणना करने वाला होता है। कलनात्मक काल (गणना करने वाला) दो तरह का होता है। पहला स्थूल होने से मूर्त संज्ञक (व्यवहारिक) और दूसरा सूक्ष्म होने से अमूर्त संज्ञक (अव्यवहारिक) कहा जाता है । साथ ही मूर्त संज्ञक मैं दिन, घटी, पल, मास, वर्ष, युग कल्पादि है। आर्थात त्रुटि आदि से ब्रह्मा की आयु पर्यन्त कालों की, मीन तथा मेष की संन्धि (रेवत्यन्त) स्थान में लङ्का क्षितिज पर ग्रहों की स्थिति मे रविवार के दिन चैत्र शुक्ल प्रतिपदा आरम्भ के समय से, प्रवृति हुई। अर्थात इस समय से युगादि, मन्वन्तर, कल्प, सौरवषर्षादि की प्रवृति हुई।

आचार्य ने काल के अनादि अनन्त कहे जाने की युक्ति के लिए शास्त्रान्तर से उदाहण दिया है—

कालः पचति भूतानि सर्वाण्येव सहात्मना ।
कान्ते च पक्वस्तेनैव सहाव्यक्ते लयं व्रजेत् ।।

यही श्लोक सिद्धान्तशिरोमणि ग्रन्थ के संस्कृत व्याख्याकार नृसिंह दैवज्ञ ने अपनी टीका में कहा है।

।। काल की महिमा का पुराणों में वर्णन ।।

कलनाद्, सर्वभूतानां स कालः परिकीर्तितः ।
अनादिरेष भगवान् कालो$नन्तो$जरः परः ।।
सर्वगत्वात् स्वतन्त्रत्वात् सर्वात्मत्वान्महेश्वरः ।
ब्रह्मणो बहवो रुद्रा अन्ये नारायणादयः ।
एको$हि भगवानीशः कालः कविरिति स्मृतः।
ब्रह्मनारायणेशाना त्रयाणां प्राकृतोलयः ।
प्रोच्यते कालयोगेन पुनरेव च सम्भवः ।
परं ब्रह्मा च भूतानि वासुदेवो$पि शङ्करः ।

कालेनैव च सृज्यन्ते स एव ग्रसते पुनः ।
तस्मात् कालात्मकं विश्वं स एव परमेश्वरः।।
अनादि निधनः कालो रुद्रः सङ्कर्षणस्मृतः।
कर्षणात् सर्वभूतानां स तु सङ्कर्षणः समृतः।।
सर्वभूतसमित्वाच्च स रुद्रः परिकीर्तितः ।
अनादिनिधनत्वेंन स महान् परमेश्वरः।।
(विष्णुपुराण, कूर्मपुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराणादि से)

इस प्रकार मध्यमाधिकार सिध्दान्तशिरोमणि में कालमान के बारे में इस प्रकार बताया गया है।

योऽक्षणोर्निमेषस्य खरामभागः स तत्परस्तच्छतभाग उक्ता ।
त्रुटिर्निमेषैर्धृतिभिश्च काष्ठा तत्त्रिंशतां सद्गणकैः कलोक्ता ।।
त्रिंशत्कलाऽऽर्क्षी घटिटका क्षणः स्यान्नाडीव्दयं तै खगुणैर्दिनं च ।
गुर्वक्षरैः खेन्दूमितैरसुस्तैः षड्भिः पलं तैर्घटिका खषड्भिः ।।
स्याद्वा घटीषष्टिरहः खरामैर्मासो दिनैस्तैद्विकुभिश्च वर्षम् ।
क्षेत्रे समाद्येन समा विभागाः स्युश्चक्रराश्यंशकलाविलिप्ताः ।।

कालविभाग को परिभाषित किया है आचार्य ने पलक झपकने में जितना समय लगता है उसको एक निमेष कहते हैं। एक निमेष का तीसवाँ भाग तत्पर होता है। तत्पर के शतांश को त्रुटि कहते हैं । १८ निमेष का एक काष्ठ होता है। ३० काष्ठ की एक कला होती है। ३०कला की एक घटी होती है। दो घटी का एक मुहूर्त (क्षण) होता है। ३० क्षण का एक दिन होता है।

इसके पश्चात प्रकारान्तर से दिनादि को परिभाषित किया है। दस गुरु (दीर्घ) आक्षरों के उच्चारण का समय एक असु (प्राण) होता है। जिस अक्षर के विसर्ग के अन्त में अनुस्वार लग जावे उसे दीर्घ अक्षर कहते हैं । अर्थात एक मात्रा का लघु तथा दो मात्रा का अक्षर गुरु कहलाता है। प्राण या असु वह होता है, जितने समय में कोइ व्यक्ति एक स्वास-प्रस्वास लेता है। ६ असु का एक पल होता है और ६० पल की एक घटी तथा ६० घटी का एक दिन होता है। एक चक्र में १२ राशि, एक राशि में ३० अंश, एक अंश में ६० कला तथा एक कला में ६० विकला होता है। आचार्योक्त काल विभाग को संख्यात्मक सूत्र रुप में निम्नलिखित प्रकार से लिखकर बताते हैं ---

पलक झपकने का काल= एक निमेष= ३० तत्पर= ३०० त्रुटि।
निमेष/३०= १ तत्पर तथा, तत्पर/१००= १ त्रुटि या १ तत्पर= १०० त्रुटि
३०० त्रुटि= १ निमेष
१८ निमेष= १ काष्ठ
३० काष्ठ= १ कला
३० कला= १ घटी (नाड़ी)
२ नाड़ी= १ क्षण या मुहेर्त

प्रकारान्तर से काल विभाग-----

१० गुरु अक्षर उच्चारण काल = १ असु = मनुष्य का एक स्वास प्रस्वास।
६ असु = १ पल
६० पल = १ घटी
६० घटी = १ अहोरत्र (दिवस)
३० अहोरात्र = १ मास
१२ मास = १ वर्ष

विशेष---
नाड़ी, घटी तथा दण्ड तीनों एक ही हैं । जो समय अंगुष्ठ प्रमाण के नलिका आकार के यन्त्र से प्रदर्शित होता है वह नाड़ी है, घटी यंन्त्र से जो समय प्रदर्शित वह घटी है तथा दण्ड ( यष्टि) जैसे यंन्त्र व्दारा प्रदर्शित समय दण्ड होता है। इस प्रकार ये तीनों यंन्त्र भेद से एक ही काल को प्रदर्शित करते हैं । अतः इनके केवल नाम का भेद है। इसी प्रकार वि-उपसर्ग लग जाने से उस काल का मान ६० ( साठ) वाँ भाग प्रदर्शित होता है।

मनुस्मृति में काल बोध चक्र इस प्रकार कहा गया है ----

निमेषा दशचाष्टौ च काष्टा त्रिंशत्तु ताः कला ।
त्रिंशत्कला मुहूर्तः स्यादहोरात्रं तु तावतः ।।
(अध्याय- १, श्लोक-६४)

अर्थात् अठारह निमेष (पल झपकने का काल) का एक काष्ठ और ३० काष्ठ की एक कला, तीस कला का एक मुहूर्त और तीस मुहूर्त का एक दिनरात होता है। ठीक ऐसे ही १५ अहोरात्र का एक पक्ष (मानुष) तथा.दो पक्ष का एक मास, ६ मास का एक अयन, १२ मास का एक वर्ष कहा है। इस प्रकार भास्कराचार्य ने मनुस्मृति के अनुसार काल विभाग कहा है। विष्णुपुराण में पराशर मुनी ने तृतीय अध्याय में १५ निमेष का एक काष्ठ कहा शेष सभी विभाग मनुस्मति अनुसार ही कहे गये हैं। यथा---

काष्ठा पञ्चदशाख्याता निमेषा मुनिसत्तमः ।
काष्ठा त्रिंशत्कला त्रिंशत्कलामौहूर्तिको मुनिसत्तम्।।
तावत्संख्यैरहोरात्रं मुहूर्तैर्मानुषं स्मृतम् ।
अहोरात्राणि तावन्ति मास पक्षद्वयात्मकः।।
तैः षड्भिरयनं वर्षं द्वेऽयने दक्षिणोत्तरे ।
अयनं दक्षिणं रात्रिदेवानामुत्तरं दिनम ।।
(मनुस्मृति श्लोक सं.८, ९, १०)

वृहदवशिष्ठ सिद्धान्त में भी कालमान भास्कराचार्योक्त ही कहा गया है। यथा---

"दशगुर्वक्षरोच्चारण कालः प्राणोऽभिधीयते ।
तत्षटकैश्च पलं षष्ट्यानाडीषष्ट्यार्क्षजं दिनम्।।"
(अध्याय.१ श्लोक ४)

सोम सिद्धान्त में भी यथावत ही कहा गया है----

"दशगुर्वक्षरा प्राणः षड्भिः प्राणैर्विनाडिका।
तत्षष्ट्या नाडिका प्रोक्ता नाडीषष्ट्या दिवानिशम्॥""

आर्यभट ने आर्यभटीय कालक्रियापद श्लोक २ में इस प्रकार कालमान विवेचन किया है।
यथा-

गुर्वक्षराणि षष्टिर्विनाडिकाक्षीषडेव वा प्राणाः।
एवं काल विभागःक्षेत्रविभागस्तथाभगणात्॥

आर्षग्रन्थ सूर्य सिद्धान्त में कालमान की परिभाषा इस प्रकार दर्शाया गया है--

प्राणादिः कथितो मूर्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्तसंज्ञकः।
षड्भिःप्राणैर्विनाडीस्यात्तत्षष्टया नाडिकास्मृता॥
नाडीषष्ट्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम्।
तत् त्रिंशता भवेन्मासः सावनोऽर्कोदयैस्तथा॥
(सूर्यसिद्धान्त श्लोक संख्या ११, १२,)

इस प्रकार प्राण आदि मूर्त संज्ञक और त्रुटि आदि अमूर्त संज्ञक काल कहे गये हैं। ६ प्राण की एक विनाडी (पल), ६० विनाडी (पल) की १ नाडी, ६० नाडी (घटी) का एक नाक्षत्र अहोरात्र कहा गया है। ३० अहोरात्र का एक मास होता है। दो सूर्योदय के मध्य का काल सावन दिन होता है।
ठीक इसी प्रकार ३० तिथियों का एक चान्द्र मास, एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रान्ति पर्यन्त (जब तक सूर्य एक राशि पर रहता है। ) तो उस काल को एक सौर कहते है। १२ सौर मासों का एक वर्ष एक वर्ष का १ दिव्य दिन होता है।
जिस प्रकार तिथि एवं संक्रान्तियों से चान्द्रसौर मास बतलाये गये है उसी प्रकार ३० सावन दिनों का एक सावन मास, तथा १२ मासों का सावन वर्ष, १२ चान्द्रमासों का एक चान्द्र वर्ष तथा १२ सौरमासों का १ सौर वर्ष होता है। परन्तु समय के नियमन के लिए ज्योतिष शास्त्र में वर्ष गणना सौर वर्षों में, तथा मास गणना चान्द्रमासों एवं दिन गणना सावन दिनों में ही की गई है।
देवताओं और असुरों का अहोरात्र (दिन एवं रात्रि) एक दूसरे से विपरीत क्रम से होता है। (जब देवताओं का दिन होता है तो दैत्यों की रात्रि तथा जब देवों की रात्रि तब दैत्यों का दिन होता है) छः से गुणित उन साठ अहोरात्रों के तुल्य देवों का तथा दैत्यों का एक वर्ष होता है। अर्थात् ६×६०=३६० सौर वर्षो का एक दिव्य वर्ष होत है।
इस प्रकार सिद्धान्तशिरोमणि में कालमान के बारे में इस प्रकार बताया गया है ---

रवेश्चक्रभोगोऽर्कवर्षं प्रदिष्टं द्युरात्रं च।
देवासुराणां तदेव॥
रवीन्दोर्युतेः संयुतिर्यावदन्या विधोर्मास।
एतच्च पैत्रं द्युरात्रम्॥
इनोदयद्वयान्तरं तदर्कसावनं दिनम्।
तदेव मेदिनीदिनं भवासरस्तु भभ्रमः॥
(सिद्धान्तशिरोमणि कालमानाध्याय श्लोक संख्या- १९, २०,)

सूर्य जितने समय में मेषादि भ चक्र में भ्रमण करते हुए अपने पूर्व (आरम्भ) स्थान पर एक बार वापस आता है उतने काल को रवि वर्ष कहते हैं। उसका बारहवाँ भाग सौर मास होता है तथा मास के ३० वें भाग को सौर दिन कहते हैं। दिन का साठवाँ भाग एक घटी होता है तथा घटी के साठवें भाग को विघटी कहते हैं। यह पूर्व में कही गई परिभाषा के अनुरुप है।

दैवमान:--
एक वर्ष देवता तथा असुरों के लिए एक अहोरात्र होता है लेकिन जब देवताओं का दिन होता है तब दैत्यों की रात्रि होती है। देवताओं का एक वर्ष ३६० सौर वर्ष के तुल्य होता है।

चान्द्रमान:---
सूर्य चन्द्र की एक बार युति के जितने काल के पश्चात् जब दूसरी बार युति होती है उस काल को चान्द्रमास कहते हैं। सूर्य-चन्द्र की युति अमावस्या को होती है, अतः इसके बाद जब दूसरी बार सूर्य-चन्द्र की युति होती है तो उस काल को विधुमास अर्थात चान्द्र मास कहते हैं। इस प्रकार यह चान्द्रमास अमावस्रू से आरम्भ होकर दूसरी अमावस्या को समाप्त होता है।

पित्रृमान:---
यह चान्द्रमास पित्रृगणों का एक अहोरात्र होता है।
सावन मान:--- सूर्य का एक बार उदय से दूसरी बार उदय होने के अन्तर काल को सूर्य का सावनदिन (काल) या कुदिन (पृथ्वी का दिन ) कहते हैं। ठीक इसी प्रकार अन्य ग्रहों के दो बार लगातार उदयान्तर काल को उनका सावन दिन कहते है।

नाक्षत्रमान :--
पृथ्वी जितने समय में भचक्र में अपनी धुरी पर एक भ्रमण करती है उस काल को नाक्षत्र दिन कहते है।
जैसा कि सूर्यसिध्दान्त में "मानाध्याय" में बताया गया है, ब्राह्म, दिव्य, पित्र्य, प्राजापत्य, गौरव (गुरु सम्बन्धी बार्हस्पत्य), सौर, सावन, चान्द्र तथा नाक्षत्र ये नव प्रकार के काल मान बताये गये हैं।

विशेष :-- ब्रह्मा के काल को ब्राह्म मान कहा गया है। १कल्प ब्रह्मा का एक दिन तथा उतनी ही रात्रि होती है।
दिव्य:--- देवताओं का मान दिव्य मान होता है। मानव १वर्ष = १ दिव्यदिन होता है।
पित्र्य:-- पितरों से सम्बन्धित कालमान पित्र्यमान होता है। चन्द्रमा के ऊर्ध्व भाग पर १५ दिन (मानव दिन) का एक दिन, तथा १५ दिन की एक रात्रि होती है। यही पित्र्य दिन होता है।
प्राजापत्य:-- १४ मनु (मन्वन्तर व्यवस्था ) का मान प्राजापत्य मान होता है।

गौरव:--- बृहस्पति के मध्यम गति के अनुसार गौरव या बार्हस्पत्य मान होता है। १ संवत्सर बृहस्पति का वर्ष होता है। तथा संवत्सरों की संख्या ६० होती है।

सौर:-- सूर्य की गति के अनुसार अहोरात्रादि सौरमान होते हैं । सूर्य का एक चक्र भ्रमण एक सौर वर्ष होता है।

सावन:-- सूर्योदय से सूर्योदय तक का काल एक सावन दिन होता है।

चान्द्र:-- तिथियों का भोगकाल चान्द्र दिन होता है।

नाक्षत्र:--- नक्षत्र के एक उदय से दूसरे उदय तक का काल नाक्षत्रकाल (दिन) होता है। इसका प्रमाण ६० घटी. होता है।

ब्राह्मं दिव्य तथा पित्र्यं प्राजापत्यं च गौरवम् ।
सौरञ्च सावनं चान्द्रमार्क्ष मानानि वै नव।।
(सूर्यसिद्धान्त श्लोक सं.१)

यहाँ (भूलोक में) सौर, चान्द्र, नाक्षत्र और सावन इन ४ मानों का व्यवहार होता है । (६०) संवत्सरों की बार्हस्पत्य मान से गणना होती हैं। शेष चार (ब्रह्म, पित्र्य, दिव्य, प्रजापत्य) मानों की नित्य आवश्यकता नहीं पड़ती । दिन- रात्रि का मान षडशीतिमुख संक्रान्तियों का मान, आयन (दक्षिणायन, उत्तरायन,) विषुव (सौम्यगोल, याम्यगोल) तथा संक्रान्तियों का पुण्यकाल सौरमान से ज्ञात किया जाता है।

इस प्रकार देवताओं और असुरों के वर्ष प्रमाण १२ हजार वर्षों (१२ सहत्र दिव्य वर्षों ) का एक चतुर्युग (महायुग) कहा गया है। सौरमान से दश हजार गुणित ४३२ अर्थात् ४३२०००० वर्षों का एक महायुग होता है। कृतयुगादि प्रत्येक युगों के सन्ध्या सन्ध्यांशो से युक्त चतुर्युग का मान कहा गया है। कृत-त्रेता-द्वापर-कलियुगों की पाद (१२०० दिव्य वर्ष) व्यवस्था धर्मपाद के अनुरुप ही है । (अर्थात् कृत (सत्य) युग में चार, त्रेता में तीन, व्दापर में २ तथा कलियुग में एक पाद धर्म होता है। इसी के अनुरुप कृतयुग ४ पाद (४×१२०० दिव्य वर्ष), त्रेता तीन पाद, तथा कलियुग १ पाद तुल्य (दिव्यवर्ष) होता है। )।।

३६० सावनदिन=१वर्ष=१दिव्य दिन।

अतः ३६० वर्ष = दिव्य वर्ष

१२००० दिव्य वर्ष == १ महायुग।

१२०००×३६०=४३२०००० सौरवर्षाणि। सूर्य सिद्धान्त के मध्यमाधिकार में यहाँ युगप्रमाण इस प्रकार दिया गया है।

तद्द्वादशसहस्राणि चर्तयुगमुदाहृतम् ।
सूर्याब्दसङ्ख्यया व्दित्रिसागरैरयुताहतै ।।
सन्ध्यासन्ध्यांशसहितं विज्ञेयं तच्चतुर्युगम्।
कृतादीनां व्यवस्थेयं धर्मपाद व्यवस्थया ।।
(सूर्यसिद्धान्त म. धि. श्लोक १५, १६)

४,३२,००० (चार लाख बत्तीस हजार) सौर वर्षों का चतुर्गुणित ४,३२,००० × ४ =१७२८००० सौर वर्ष का कृतयुग (सत्ययुग) प्रथम युग चरण।

त्रिगुणित ४,३२,००० × ३ = १२, ९६००० सौर वर्ष का त्रेता नामक द्वितीय युग चरण है।

द्विगुणित ४,३२,००० × २ = ८, ६४, ००० सौर वर्ष का द्वापर नामक तृतीय युगचरण ।

तथा एक गुणित ४, ३२, ००० × १ = ४, ३२, ००० सौर वर्ष का कलियुग नामक चतुर्थ युग चरण है।

योग:-- ४, ३२, ००० × १० = ४३, २०, ०००

इन युग चरणों के बारहवें भाग प्रमाण की इन चरणों की संन्धियाँ है। इतनी ही युग चरण के आरम्भ में तथा इतनी ही अन्त में होती है । इन युग सन्धियों सहित ये युगचरण प्रमाण कहे गये है।

कृतयुग के आरंभ में संध्या वर्ष = १, ४४,००० और इतने ही अंत में।

त्रेता के आरंभ में संध्या वर्ष = १,०८०००० और इतने ही अंत में ।

द्वापर के आरंभ में संध्या वर्ष = ७२०००० और इतने ही अंत में

कलियुग के आरंभ में संध्या वर्ष = ३६०००० और इतने ही अंत में ।

इन चारों युग चरण प्रमाण को जोड़ने से एक (महायुग ) प्रमाण होता है यथा---

१७२८०००+१२९६०००+८६४०००+४३२०००=४३,२०,००० सौर वर्ष का एक महायुग होता है।

७१ महायुग का एक मनु होता है। १४मनु का ब्रह्मा का एक दिन तथा इतने ही प्रमाण की एक रात्रि होती है। अतः ७१×१४=९९४ महायुग का ब्रह्मा का एक दिन होता है

स्मृति पुराणादि में कहा गया है "चतुर्युगसहस्रेण ब्रह्मणों दिनमुच्यते" । इनमें कहे गये कथन की शंका का परिहार करते हैं । एक मनु में कृतयुग चरण तुल्य १५ संधियाँ १४ मनुओं के आरम्भ से अंत तक होती है। अतः १५×१७,२८,०००=२,५९,२०, ००० सौर वर्ष। ये सौर वर्ष ६ महायुगों ( ६×४३,२०,०००=२,५९,२०,०००) के तुल्य है। अतः ब्रह्मा का एक दिन = ९९४+६= १००० महायुग अर्थात चतुर्युग सहस्र गुणा का हुआ । यह सिद्ध हो गया। ब्रह्मा के दिन को एक कल्प कहते हैं तथा रात्रि भी इतने ही प्रमाण की होती है। इसप्रकार ब्रह्मा का एक दिन-रात्रि दो कल्प तुल्य होता है। इस कल्प के दिन मान से ब्रह्मा की आयु१००(३६०×२×१०० कल्प ) वर्ष की होती है।

ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त में ब्रह्मगुप्त ने मध्यमाधिकार के प्रथम अध्याय में महायुग, युगचरण मान, युग संधि आदि इस प्रकार कहा है।

खचतुष्टयरदवेदा ४३,२०,००० रविवर्षाणां चतुर्युगं भवति ।
सन्ध्यासन्ध्यांशैः सह चत्वारि पृथक् कृतादिनि।।
"युगदशभागो गुणित कृतं १७,२८००० चतुर्भिस्त्रिभिर्गुण १२,९६,००० स्त्रेता।
द्विगुणो ८,६४,००० व्दापरमेकेन सङ्गुणः ४,३२,००० कलियुगं भवति।।
(ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त, म.अधिकार श्लोक सं.७,८)

यहां पर चतुर्युग (महायुग) मान ४३,२०,००० के दशमांश का ४,३,२, तथा एक गुणित क्रमशः कृतयुग, त्रेता, द्वापर, तथा कलियुग कहा है।

यथा---

चतुर्युग (महायुग) =१२००० दिव्य वर्ष सौरवर्ष
१२००० × १/१०=१२०० दिव्यवर्ष महायुग का दशमांश
१२०० × ४ =४८०० दिव्यवर्ष कृत (सत्य) युग। १७२८०००,
१२०० × ३ = ३६०० दिव्य वर्ष त्रेता युग. १२९६०००,
१२०० × २ = २४०० दिव्यवर्ष द्वापर युग। ८६४०००,
१२०० × १ = १२०० दिव्य वर्ष कलियुग। ४३२०००

सन्धि
कृतयुग ४८०० × १/६ = ८०० दिव्यवर्ष सन्धि (४०० प्रथम सन्धि + ४०० द्वितीय सन्धी )
त्रेता ३६०० × १/६ = ६०० दिव्यवर्ष सन्धि (३००+३००)
द्वापर २४०० × १/६ = ४०० दिव्य वर्ष सन्धि (२००,+२००)
कलियुग १२०० × १/६ = २०० दिव्य वर्ष सन्धि (१०० +१००)

सन्ध्या सन्ध्यांश से रहित युगों के मान -------
दिव्यवर्ष। सौरवर्ष।
४८०० - ८०० = ४००० कृतयुग १४४००००
३६०० - ६०० = ३००० त्रेतायुग १०८००००
२४०० - ४०० =२००० द्वापरयुग ७२००००
१२०० - २०० = १०००। कलियुग ३६००००
इस प्रकार मूर्त ( व्यवहारिक ) काल प्रमाण में ७१ महायुगों (चतुर्युगों) का एक मन्वन्तर कहा गया है एक मनु के अन्त में कृतयुग (४८०० दिव्य वर्ष) तुल्य मनु की सन्धि होती है। सन्धिकाल जलप्लव कहलाता है। अर्थात एक मनु के समाप्ति और द्वितीय मनु के आरम्भ के पूर्व ४८०० दिव्य वर्षो तक पृथ्वी पर जल- प्लवन रहता है। यथा---

युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते ।
कृताब्दसङ्ख्यस्तस्यान्ते सन्धिः प्रोक्तोजलप्लवः।।
(सूर्यसिद्धान्त मध्यमाधिकार श्लोक संख्या १८)।